तातेड़ (ओसवाल) वंश का इतिहास

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कूलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय

एवं उपाध्यक्ष अखिल भारतीय तातेड़ परिवार

ओसवाल वंश का इतिहास

वीर निवार्ण संवत् एक में आचार्य रत्नप्रभ सुरिजी का विद्याधर वंश में जन्म हुआ। वीर निर्वाण संवत् 40 में आचार्यश्री स्वयंप्रभ सुरिजी ने रत्नप्रभ सुरिजी को मुनि दीक्षा प्रदान की। आचार्य स्वयंप्रभ सुरिजी ने अपनी अंतिम अवस्था और मुनि रत्नप्रभ की सुयोग्यता देखकर वीर निर्वाण संवत् 52 में मुनि रत्नप्रभ को आचार्य पद से विभूषित कर चतुर्विध धर्म संघ का नायक बना दिया और अपना सर्वाधिकार उनको सौंप दिया। विद्याधर आचार्य रत्नप्रभ सूरिजी को श्री पार्श्वनाथ स्वामी के छट्ठे पटधर माना जाता है। आचार्य रत्नप्रभ सुरि ने मुनि रूप में 12 वर्ष तक आचार्य स्वयंप्रभ सुरिजी से द्वादशांगी का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया।

उसके बाद से आचार्य रत्नप्रभ सुरिजी 500 मुनियों को साथ लेकर तीर्थाधिराज शत्रुंजय की यात्रा कर अर्बुदाचल पधारे। वहाँ की अधिष्ठात्री चक्रेश्वरी देवी ने प्रार्थना की कि हे आचार्यवर! आप मरूधर की ओर विहार करें तो वहां बहुत बड़ा लाभ होगा। आचार्य मरूधर भूमि की ओर विहार करते–करते वीर निवार्ण संवत् 70 में उपकेशपुर (वर्तमान में ओसियाँ) पधारे। वहां पर क्षत्रिय लोग मांस–मदिरा का प्रचुर सेवन करते थे। सूर्यवंशी राजा उत्पलदेव एवं चंद्रवंशी मंत्री उहड़देव द्वारा उपकेशपुर (वर्तमान में ओसियाँ) की स्थापना की गई थी।

उपकेशपुर नगरी का राजा उत्पलदेव अपनी सूरवीरता के कारण दूर–दूर तक प्रसिद्ध था। उस समय इस नगर में वाममर्गियों का बड़ा जोर था। अतः राजा उत्पलदेव पर भी इस धर्म ने अपना प्रभाव जमा रखा था। चामुण्डा उपकेशपुर नगर की आराध्य देवी थी। इस नगरी में मदिरा–मांस का इतना बोलबाला था कि रत्नप्रभ सुरिजी एवं उनके संघ के 500 मुनियों को प्रासुक भोजन नहीं मिलता था।

आज जो नगरी ओसियाँ के नाम से प्रसिद्ध है, वह प्राचीन काल में "उपकेशपट्टन" के नाम से विख्यात थी। प्राचीन जैन इतिहास से ज्ञात होता है कि यह बड़ा ही विशाल एवं महत्वपूर्ण नगर था। इसकी विशालता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि वर्तमान में ओसियाँ से 12 मील दूर "तिंवरी" नामक ग्राम है वह 'उपकेशपुर' की "तैलीवाड़ा" था, इसके 6 मील दूर 'खेतासर' नामक ग्राम है वह इस नगरी का 'खतरीपुरा' था। यहां से 6 मील दूरी पर "पंडितजी की ढाणी" ग्राम है वह इस नगरी का पण्डितपुरा था। यहां से 24 मील दूर "लोहावट" नाम का ग्राम है, वह इस नगरी का 'लोहावती' के नाम से प्रसिद्ध था। 20 मील दूर जो 'घटियाला' गांव है, वह इस नगरी का भीमकाय दरवाजा था। उस स्थान की खुदाई करने से कई प्राचीन चिन्ह उपलब्ध हुए हैं। अतः इस विवरण से पता चलता है कि उपकेशपुर (वर्तमान ओसियाँ) बहुत बड़ा नगर था। जैसे आज मुम्बई–कोलकता व्यापार के केन्द्र हैं और दूर–दूर के लोगों ने व्यापार्थ यहां आकर अपना मूल स्थान यहाँ बना लिया है। इसी प्रकार उस समय नूतन बसे उपकेशपुर में व्यापारार्थ दूर–दूर से आकर लोग बस गये हों, यह संभव हो सकता है।

आचार्य रत्नप्रभ सूरिजी उपकेशपुर पधार तो गये पर वहां एक भी आदमी ने उनका आदर–सत्कार नहीं किया और न ठहरने के लिए स्थान दिया। इस कारण

आचार्य रत्नप्रभ सूरिजी ने 500 साधुओं के साथ लूणाद्री पहाड़ी पर जाकर ध्यान लगा दिया। 500 मुनियों को प्रासुक भोजन न मिलने के कारण आचार्य रत्नप्रभ सुरिजी ने सभी को विहार की अनुमति दे दी।

वहां की अधिष्ठात्री देवी चामुण्डा ने अपने ज्ञान द्वारा यह समाचार मालूम करके विचार किया कि अर्बुदाचल से देवी चक्रेश्वरी द्वारा भेजे हुए महात्मा मेरे नगर में आकर इस प्रकार भूखे प्यासे चले जांय तेा इसमें मेरी क्या शोभा रहेगी ? अतः चामुण्डा देवी ने आचार्य रत्नप्रभ सुरिजी के चरण कमलों में उपस्थित होकर प्रार्थना की कि हे प्रभो! आप कृपा कर यहाँ चातुर्मास करावें, आपको बहुत लाभ होगा। रत्नप्रभ सुरिजी ने आदेश दिया विकट तपश्चर्या करने वाले मेरे साथ रहें। शेष विहार कर सुविधा के क्षेत्र में चले जावें। इस पर कनकप्रभादि 465 साधु विहार कर कोरंटपुर की ओर चले गये। और शेष 35 साधु रत्नप्रभ सूरिजी की सेवा में रहे, जो मास, दो मास, तीन मास और चार मास की तपस्या करने में सक्षम थे।

उपकेशपुर के मंत्री उहड़ के पुत्र त्रिलोकसिंह की पीणा जाति के सर्प काटने के कारण मृत्यु हो गई। त्रिलोकसिंह का विवाह राजा उत्पलदेव की पुत्री सौभाग्यसुंदरी के साथ हुआ था। अतः वह राज जमाई कहलाता था। राज जमाई की मृत्यु के कारण नगर में हाहाकर मच गया। उसकी अर्थी उठाकर लोग ले जा रहे थे, उस समय रास्ते में एक लघु जैन साधु ने कहा "अरे मूर्ख लोगों! इस जीते हुए मंत्री पुत्र (राज जमाई) को जलाने के लिए श्मशान क्यों ले जा रहे हो ?" यह कहकर वह लघु जैन साधु गायब हो गया। बहुत ढूंढने पर नही मिलने के कारण इस आशा के साथ कि वह लुणाद्री पहाड़ी पर निवास कर साधुओं में से एक होगा, अर्थी को वहां ले आये।

राजा व मंत्री ने रत्नप्रभ सूरिजी से निवेदन किया कि हमारे पुत्र रूपी धन को मृत्यु रूपी चोर ने हरण कर लिया है। आज हम अत्यन्त दुःखी है। आप कृपा करके हमारे पुत्र को जिंदा करके जीवन दान देवें। रत्नप्रभ सूरिजी के शिष्य वीरधवल उपाध्याय ने अच्छा मौका देखकर राजा एवं मंत्री को कहा जरा गर्म पानी लाओ। गर्म पानी से आचार्यश्री के चरणांगुष्ठ का प्रक्षालन कर अर्थी पर छिड़का। गर्म जल छिड़कते ही मंत्री पुत्र (जमाई पुत्र) खड़ा हो गया। राजा, मंत्री व उपस्थित लोगों ने इसे चमत्कार समझा तथा उनकी खुशी का पार नहीं था। सब लोग अत्यन्त प्रसन्न थे। चारों तरफ हर्ष के नांद व बाजे बजने लगे। चारों तरफ आचार्यजी रत्नप्रभ सूरिजी और जैन धर्म की भूरि–भूरि प्रशंसा होने लगी।

राजा और मंत्री ने आचार्यश्री का ऋण चुकाने के लिए माणक–मोती, हीरे जवाहरात उनको भेंट करने के लिए ले गये। आचार्यश्री ने कहा "हम जैन साधु हैं। कंचन–कामिनी को हमनें त्याग रखा है। हम अपरिग्रही हैं। हम कोई प्रकार का परिग्रह ग्रहण नहीं करते हैं।" आचार्यश्री के इस जवाब से राजा, मंत्री व जनता बहुत प्रभावित हुई। सभी की जबान पर था कि ऐसे निस्पृही, शुद्ध साधु कहाँ मिलते हैं ? राजा ने पुनः प्रार्थना की कि हे कृपा सिंधु! आपके आचार व्यवहार से हम अनभिज्ञ हैं। आप द्रव्य और राज्य नहीं लेते तो हमें ऐसा रास्ता बताऐं कि आपके इस उपकार का बदला चुका सकें। आचार्यश्री ने कहा, "हम अपने लिए कुछ नहीं चाहते हैं। हमारा लक्ष्य है कि कुमार्ग पर चलने वाले जीवों को सत्मार्ग पर लाया जाय। आप अगर हिंसा से अहिंसा के रास्ते पर आना चाहते हैं तो मांस–शराब छोड़कर जैन धर्म के मर्म को समझकर अहिंसात्मक जैन धर्म स्वीकार करें।"

आचार्यश्री रत्नप्रभ सूरिजी के प्रवचन से प्रभावित होकर गुरूदेव की आज्ञा मानकर 3,84,000 राजपूतों ने जैन धर्म अंगीकार किया।

तातेड़ (ओसवाल) वंश का इतिहास

खतरगच्छीय यति, रामलालजी ने अपनी "महाजनवंशीय मुक्तावली" नामक पुस्तक में लिखा है कि वीर निवार्ण के 70वें वर्ष में आचार्य रत्नप्रभ सूरिजी ने उपकेशपुर (वर्तमान ओसियाँ) महाराज उपलदेव आदि क्षत्रियों को प्रतिबोध देकर जैन श्रावक बनाए और उन्हें "ओसवाल" वंश नाम से पुकारा। उनके निम्न 18 गौत्र स्थापित किएः (1) तातहड़ (2) बाफणा (3) कर्णावट (4) बलहा (5) मोराक्ष (6) कूलहट (7) विरहट (8) श्री श्रीमाल (9) श्रेष्ठी (10) सुचिंति (11) आदित्यनाग (12) भूरि (13) भाद्र (14) चिंचट (15) कुंभट (16) कन्नोजिये (17) डिडू (18) लघुश्रेष्ठि

ऐसी मान्यता है कि आचार्यश्री रत्नप्रभ सुरिजी के प्रवचन से प्रभावित होकर परमार वंशज त्रिलोकसिंहजी के बड़े भाई (तातजी) ताता होकर (शीघ्र ही) होकर खड़े हुए तथा मांस–मध सेवन का त्याग किया तथा जैन धर्म स्वीकार किया। गुरूदेव ने इनको प्रथम ओसवाल वंशज तातहड़ (तातेड़) के नाम से सम्बोधित किया। उसी समय से तातेड़ (ओसवाल) वंश का सूत्रपात हुआ। धन्य है वह बेला जब हमें तातेड़ वंश के रूप में पहचान मिली। परमार राजपूत वंश के अन्य कई व्यक्तियों ने उस समय जैन धर्म स्वीकार किया तथा वे तातेड़वंशी कहलाए। वहां से तातेड़ परिवार व्यवसाय की दृष्टि से मण्डोर, जोधपुर, कोरणा, भीनमाल, जालोर, सिवाना, जसोल, बलोतरा, मेड़ता, जाडण, बिलाड़ा, मेड़ता रिंया, गोविन्दगढ़ आदि नगरों में निवास करने लगे तथा वहाँ अच्छी धार्मिक एवं सामाजिक ख्याति अर्जित की। तातेड़ गोत्रवंशी सम्पन्नता के धनी थे।

मेड़ता से बछनोर, फतेहपुर, खामनोर, कुँआरिया, मालवा क्षेत्र, भौड़ गाँव, धार, इन्दौर, रतलाम व्यापार के लिए अलग–अलग तातेड़ परिवार बस गए। इन स्थानों पर वहाँ के राजा–महाराजा तातेड़ परिवार से राजकीय संचालन में सलाह लेते थे। यहाँ पर तातेड़ परिवारों ने कई धार्मिक कार्य सम्पन्न किए। ओसियाँ से तातेड़ परिवार नागौर, जैसलमेर, तिंवरी, आगरा, लुधियाना, दिल्ली, जयपुर, फतेहपुर, राताकोर, सनवाड़, उदयपुर, भीलवाड़ा एवं रायपुर नगरों में भी व्यापार के लिए निवास करने लगे।

तातेड़ गोत्र में साढे चीमोतर शाह हुए, जिसमें से उनीसवें नम्बर पर आसोजी को शाह की पदवी मिली। विक्रम संवत् 889 वर्ष में एक तातेड़ भामाशाह की एतिहासिक घटना प्रसिद्ध है। अहमदाबाद निवासी नौलजी तातेड़ के पुत्र जो कि 25 वर्ष की अवस्था में थे, ऊँट भरकर सोने की मोहरें लाए तथा एक विशाल आयोजन में पूरे नगर में समारोह में उपस्थित व्यक्तियों को लाईन के अनुसार प्रत्येक को सोने की एक मोहर भेंट की।

विक्रम संवत 1444 में बिलाड़ा ग्राम में तातेड़ परिवार के सदस्यों ने सूरज मलोत के बास में स्थित बावड़ी पनघट जिनलय का जिर्णोदार करवाया। जहाँ–जहाँ तातेड़ परिवार बसा, धर्मशाला एवं जीव दया रक्षा हेतु पंजरा पोल बनवाई। बनेड़ा (उदयपुर) गाँव के वर्धमानजी तातेड़ ने ढेबर झील का निर्माण करवाया, उसी समय से ढेबरिया तातेड़ कहलाए। वही झील आज उदयपुर में जयसमंद झील के नाम से प्रसिद्ध है। बनेड़ा ग्राम से तातेड़ परिवार करोबार हेतु जयपुर, इन्दौर, रतलाम आदि क्षेत्रों में निवासित हुए। बनेड़ा ग्राम में तातेड़ परिवार का सती माताजी का स्थान (मन्दिर) आज भी प्रसिद्ध है।

विक्रम संवत 1554 में लवेरा बावड़ी से तातेड़ परिवार गांगाणी, तिंवरी, जोधपुर, जालोर, जसोल, नाडोल, धाकड़ी ग्रामों में व्यवसाय हेतु स्थानान्तरित हुए। तातेड़ परिवार अमृतसर, लुधियाना, आगरा, दिल्ली में भी बसे हुए हैं। मुर्शीदाबाद में विक्रम संवत 1559 आषाढ़ सुदी 10 को तातेड़ परिवार ने कुन्थुनाथ बिम्ब की स्थापना करवाई।

वर्तमान में तातेड़ परिवार पूरे भारतवर्ष में फैला हुआ है। यह तातेड़ परिवार का संक्षिप्त इतिहास है। कुलगुरूओं से खोज करके विस्तृत इतिहास की जानकारी की जानी है। यह पूरा शोध का विषय है। अखिल भारतीय तातेड़ परिवार का जनगणना के साथ यह भी लक्ष्य है कि व्यवस्थित शोध होकर तातेड़ वंश का प्रामाणिक इतिहास लिखा जाए। अखिल भारतीय तातेड़ परिवारों से मोटे रूप में जानकारी मिल रही है की भारत में कुल हमारे 10,000 परिवार इस समय निवास कर रहे हैं। हम सभी मिलकर यह प्रयास करें कि पूरे भारत के समस्त तातेड़ परिवारों की जनगणना होकर एक डायरेक्ट्री प्रकाशित हो ताकि भाई–भाई के सम्पर्क में रहे एवं उसके दुःख–दर्द में सहभागी बने।